International Journal of Education and Science Research Review
E-ISSN 2348-6457
Volume-3, Issue-3 June- 2016, P-ISSN 2349-1817
www.ijesrr.org Email- editor@ijesrr.org

भारतीय समाज में दलित आंदोलन के इतिहास का संक्षिप्त अध्ययन

डॉ0 मनोरमा राय,
विभागाध्यक्ष, समाजशास्त्र विभाग
धर्मेन्द्र सिंह मैमोरियल कॉलिज, अटौला, मेरठ

सार–

आज का दलित सामाजिक न्याय की लड़ाई के साथ–साथ अपनी अस्मिता की लड़ाई भी लड़ रहा है। उसकी जाति को ही सदियों से गालीवाचक बना दिया गया है। आज जब वह लिखेगा तो अवश्य ही वह गाली बनी अपनी जाति की उपेक्षा और घृणा की पीड़ा को आंकेगा ओर उस बर्बरता पर अपना आक्रोश उगलेगा। उसे रोक पाना अब किसी के बस की बात नहीं है। यह परिवर्तन का नियम है। राख ही जानती है जलने का दर्द। उसे नम्रता पूर्वक स्वीकार किया जाना चाहिए। जो भोगा गया है, वही लिखा जायेगा। जब सदियों से मृत प्रायः मूक लोग अब बोलने लगे है लिखने लगे हैं। उन बहादुर पूर्वजों का इतिहास, उनके द्वारा किये गये आंदोलनों का इतिहास, उनके द्वारा की गई समाज सेवा, त्याग और बलिदान का इतिहास जो अपने मुक्तिदाता डॉ0 बाबा साहब अम्बेडकर के एक–एक शब्द पर, उनके एक–एक आव्हान पर अपनें प्राणों को न्यौछावर कर देने के लिये सदैव तत्पर रहा करते थे। उन बहादुर पूर्वजों का अमर इतिहास भावी पीढ़ी के लिये सुरक्षित रखा जा सके, ताकि अतीत की भावी पीढ़ी उससे कुछ शिक्षा ग्रहण कर सके, लाभ उठाकर अपने जीवन की दिशा में परिवर्तन ला सके।

प्रस्तावना–

दुनिया के तमाम हिस्सों में जन–आंदोलनों को पढ़ने, लिखने और समझने का मापदंड और नजरिया भी अलग–अलग रहा है। कहीं वर्ग–संघर्ष, कहीं जाति–संघर्ष तो कहीं लोकतंत्रीकरण की प्रक्रिया के रूप में इसे देखने और समझने का प्रयास किया जाता रहा है। जहाँ तक भारत में जन–आंदोलनों की बात है तो यहाँ पर हर विषय पर आधारित विभिन्न तरह के जन–आंदोलन को देखा और समझा जा सकता है और इसका सबसे बड़ा कारण है कि भारतीय समाज दुनिया के अन्य समाजों से एकदम अलग, जाति और वर्ण पर आधारित समाज है जहाँ वर्ग–संघर्ष के साथ–साथ जाति और वर्ण संघर्ष पर आधारित जन–आंदोलनों का लम्बा इतिहास रहा है। दुनिया के तमाम हिस्सों की तरह एक वर्ग जो इस जाति और वर्ण पर आधारित अलोकतांत्रिक, शोषणयुक्त, सामंतवादी सामाजिक व्यवस्था को बनाये रखना चाहता है तो दूसरी तरफ इस शोषणयुक्त व्यवस्था का शिकार शोषित वर्ग–जातियां इसे खत्म कर एक लोकतान्त्रिक मूल्यों द्वारा संचालित स्वंतंत्रता, समानता, बंधुता और न्याय पर आधारित सामाजिक व्यवस्था का सृजन करना चाहती हैं।

अन्याय की शिकार दलित जातियाँ

इतिहास इस बात का साक्षी है कि आज की वर्तमान अथवा भावी पीढ़ी जो कुछ भी बिना किसी परिश्रम के प्राप्त कर सकी है, वह सब उनके उन पूर्वजों के परिश्रम, त्याग, बलिदान और सतत किये गये संघर्ष का ही परिणाम है, जिसका सुखद फल वर्तमान पीढ़ी भोग रही है। उनमें से न जाने कितने ही उस समय के नौजवान बहादुर दलितों को अपने व समाज के सम्मान और स्वाभिमान की रक्षा करते हुये शहीद होना पड़ा। कितने ही

लोगों के घर जले, कितनी ही माँ बहनों और बहू बेटियों के साथ बलात्कार हुये और कितने ही परिवार उजड़कर तबाह हो गये, बर्बाद हो गये। क्यों लूट लिये गये उन निर्दोष लोगों के घरबार? क्यों हड़प ली गई उनकी अस्मिता? क्यों मिटा डालने की चेष्टा की गई उन वंचित लोगों के वजूद को? क्यों किये गये अनेकों प्रकार के अन्याय और अत्याचार उन निर्दोष लोगों पर? क्या कसूर था उनका ? इन प्रश्नों के उत्तर मांगना चाहेगा आज का दलित नौजवान उन लोगों से जो अपने को बहादुर कौन होने की डींग हांकते फिरते है। उन्हें इन प्रश्नों के उत्तर देन ही होंगे? आज का दलित समाज इन प्रश्नों के उत्तर पाने के लिये बेताबी से प्रतीक्षा कर रहा है, जो पाकर रहेगा।

भावी पीढ़ी के लिये चुनौती

पूर्वजों द्वारा निर्धारित मानदंडों को आधार बनाकर भावी पीढ़ी अपना लक्ष्य निर्धारित करती है, यह प्राचीन सिद्धांत है। दलित समाज के पूर्वजों ने समाज पर किये जाने वाले सवर्णों के अन्याय, अत्याचार का प्रतिकार करने और अपने अस्मिता की रक्षा करने के लिए किस प्रकार के आंदोलन चलाये वर्तमान पीढ़ी के लिये चुनौती भरा आव्हान है। इस आव्हान को आज की पीढ़ी ने स्वीकार करना चाहिये। दुनिया में परिवर्तन तभी होगा, जब संघर्ष का इतिहास रचा जावेगा, लिखा जावेगा। स्वयं की स्वतंत्रता के लिये समाज और कौम की स्वतंत्रता के लिये नई चेतना का सृजन करना होगा। मनुष्य की तरह अभिव्यक्ति की ताकत हासिल करना होगा। हमनें और हमारे पूर्वजों ने सदियों से, जिनमें हीनता, तुच्छता, आत्मनिरादर और पत्थर सा सब्र भर लिया था, उन्हें मुक्त होने दीजिये इन ग्रन्थियों से। उन्हें आत्म सम्मान निर्मित करने दीजिए ताकि वे समाज को बदलने में समक्ष हो सकें। दलितों का इतिहास दलित और जन की समस्या से जुड़ा है। जन की भाषा में रचा जा रहा है, लिखा जा रहा है।

दलितों के संबंध में

जब हम दलित जाति के आंदोलन पर विचार करते है, तब हमें तीन बातों पर विचार करना आवश्यक हो जाता है। पहला यह कि, क्या दलित जाति है, वर्ग है, या समाज है? दूसरी है उसकी इतिहास में भागीदारी क्या रही है? और तीसरा है उनके द्वारा चलाया गया आंदोलन। ''दलित, शब्द से अनेकों प्रकार का बोध होता है।'' दलित, बहुआयामी शब्द है, जिससे जाति का बोध नहीं होता। उसका सही अर्थ होना चाहिये, जिसका दमन किया गया हो, व्यक्ति के लिये किया जाता है और आम तौर पर दलित शब्द का प्रयोग अनुसूचित जाति के लिये किये जाने की परंपरा ही चल पड़ी है।

दलित जाति की पहचान

दलित शब्द व्यक्ति को अपने गौरवशाली अतीत की ओर झांकने की प्रेरणा देता है। यह अपनी अवनति, वर्तमान स्थिति और अपने तिरस्कृत जीवन के विषय में सोचने को विवश करता है। हम क्या थे, कौन थे, क्या हो गये और क्यों हो गये? आदि। दलित शब्द किसी जाति या वर्ग का परिचायक नहीं है। इससे किसी जाति या वर्ग का बोध भी नहीं होता है। इसका अर्थ होना चाहिए पीड़ित, शोषित, वंचित, उपेक्षित व्यक्ति या समाज। दलित व्यक्ति ही अछूत, शोषित, पीड़ित, वंचित या उपेक्षित कई रूपों में भारत की धरती पर फैला हुआ है, जाना जाता है। दलित जातियों में कुछ जातियाँ ऐसी भी है, जो आज भी इक्कीसवीं सदी के प्रतीक्षाकाल में

भी अपनी पुरानी स्थिति से जरा भी ऊपर नहीं उठ सकी है। आज भी उसकी स्थिति वहीं है, जो सौ दो सौ साल पहले थी।

संघर्षशील दलित साहित्यकार

संघर्षशील दलित साहित्यकारों द्वारा दलितों का शक्तिशाली साहित्य लिखा जा रहा है। वह दलितों का साहित्य जिसने वेदकाल से चली आ रही मान्यताओं, नियमों और विश्वासों को समूल हिलाकर रख दिया है। अब उसने हर पुराण पंथी बात को नकार दिया है और अपनी नीतियों, अपने विश्वासों आदि कि स्थापना करना आरंभ कर दिया है। अब दलित समाज पुराने अर्थो में ''दलित'', बनाकर नहीं रखा जा सकता है। आज के दलित समाज को अगर सौ साल पुरानी सभी स्थितियाँ लौटकर पुनः वापस आ जावे, तब भी उसे अपनी पुरानी स्थिति में नहीं रखा जा सकता है। आज का दलित समाज जागृत हो चुका है। दलितों के मार्गदाता डॉ0 बाबा साहब अम्बेडकर ने इन दलितों को जीना सीखा दिया है और अपने अधिकारों के लिये लड़ना सिखा दिया है। अब यह समाज सिर झुकाकर चुप नहीं बैठ सकता और किसी भी प्रकार का अत्याचार सहन नहीं कर सकता। अब वह अपने प्रति पूरी तरह सचेत है, जागृत है। सदियों के संताप की भट्टी ने उसे शोला बना दिया है। उसमें आग है, जलन है और प्रकाश भी है। आज के दलित समाज का यही सच्चा स्वरूप है। वह धीरे–धीरे अपना तेजपूर्ण अस्तित्व ग्रहण करता जा रहा है।

इतिहास में दलितों की उपेक्षा

क्या यह सच नहीं है, कि भारतीय इतिहास में दलितों (महारों) द्वारा राष्ट्रीय हित में मुसलमान बादशाहाओं, मराठों, पेशवाओं और अंग्रेजों की सेनाओं में ऐतिहासिक लड़ाईयाँ लड़कर विजय हासिल करवाई किन्तु उनका भारतीय इतिहास नें कहीं कोई उल्लेख नहीं किया है, आखिर क्यों ? क्या यह सच नहीं है, कि तपस्या कर रहे तपस्वी शंबूक शूद्र की राम ने इसलिये हत्या कर दी थी, क्योंकि वह शूद्र होकर तपस्या कर रहा था? इतिहास ने इसका उल्लेख क्यों नहीं किया? क्या इतिहास को और भारतीय साहित्य को राज दरबारों में ले जाकर और सिजदा करवा कर श्रृंगारिक साहित्य के नाम से विभूषित नहीं किया जाता रहा है? क्या धर्म के आगे नत मस्तक होकर साष्टांग मुद्रा में, धरती पर लेटकर, धर्म के नाम पर पोंगा पंथियों के निर्देशानुसार मनुस्मृति जैसा विकृत ग्रंथ तैयार नहीं किया गया, जिसने एक छोटे से वर्ग के हित में दूसरी विशाल वर्ग को अधिकार–विहीन बनाकर पशुतुल्य जीवन जीने को मजबूर करने की व्यवस्था दी? क्या महाभारत के पृष्ठ पोषक साहित्यकार अथवा इतिहासकारों ने एकलव्य का अंगूठा कटवा दिये जाने पर उसे ऐसा गौरवान्वित करने का प्रपंच नहीं रचा कि जिसका अंगूठा कटा था वहीं इतना अभिभूत हो गया कि इतिहास से द्रोणाचार्य का छल गायब हो गया और हर गया गुरू दक्षिणा के लिये किया गया एकलव्य का त्याग?

राष्ट्रीय समाज और दलित जांतियाँ

दलित समाज के प्रत्येक व्यक्ति को इस तथ्य से परिचित हो जाना चाहिये कि कोई भी व्यक्ति समाज से अलग रह कर अपने मानवीय अधिकारों की रक्षा नहीं कर सकता। यद्यपि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, बिना समाज के उसका कोई अस्तित्व ही नहीं है। अतः हम कह सकते हैं, कि मनुष्य एक दूसरे से संपर्क स्थापित करने के लिये ही समाज का निर्माण करते हैं। दुनियाँ का प्रत्येक मनुष्य समाज में सम्मान से जीना चाहता है और उसे स्वाभिमानपूर्वक सम्मान से जीने का मौलिक अधिकार भी प्राप्त है। तब क्या कारण है कि इस देश

में दलित जातियों को उनके इस मौलिक अधिकार से वंचित रखा गया है, उस प्रकार का राष्ट्रीय समाज भारत में देखने को नहीं मिलेगा। इस देश में हिन्दू समाज व्यवस्था के अनुसार भारतीय समाज चार वर्णो और चार हजार जाति उपजातियों के छोटे–छोटे टुकड़ों में विभाजित कर राष्ट्रीय एकता को छिन्न–भिन्न कर दिया गया है। उसी व्यवस्थ के अंतर्गत ऊंच–नीच, ब्राह्मण–अछूत, आदि विषमता मूलक समाज व्यवस्था जो विश्व में कहीं पर भी देखने को नहीं मिलेगी, भारत में विद्यमान है।

समाज व्यवस्था कैसी हो

इस समाज व्यवस्था में आमूल परिवर्तन करने व समतावादी नई समाज व्यवस्था लाने में प्रयत्नशील नये और पुराने मध्यप्रांत में डॉ0 बाबा साहेब अम्बेडकर के पहिले आरंभ किया गया सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक और राजनैतिक, दलित जातियों का आंदोलन और बाबा साहब अम्बेडकर के निधन के पश्चात चलाये गये आंदोलन का क्रमवार विवरण देकर इतिहास लिखना आवश्यक हो गया है। समाज को भौगोलिक क्रियाओं द्वारा सीमित नहीं किया जा सकता, और न ही उसे भौगोलिक सीमाओं में बांधा जा सकता है। समाज की एक निश्चित सीमा होती है, जिसके भीतर रहना प्रत्येक व्यक्ति का परम कर्तव्य समझा जाता है। समाज केवल मनुष्यों तक ही सीमित नहीं होते। पशु पक्षियों के भी समाज होते है, जिनकी विशेषताएं मनुष्य समाज जैसी ही होती है। पशु पक्षियों के समाज में भी नियमों का कड़ाई से पालन किया जाता है। तब क्या कारण है, कि दलित जातियों को समाज नहीं समझा गया और उन्हें भारतीय समाज में पुशओं से भी निम्न कोटि में रखा गया ?

दलित आंदोलन का स्वरूप

दलित जातियों पर होने वाले अन्याय, अत्याचार के विरूद्ध भगवान बुद्ध के पश्चात और डॉ0 बाबा साहब अम्बेडकर के पूर्व महाराष्ट्र और पुराने मध्यप्रदेश की उर्वरा धरती पर सर्वप्रथम महात्मा ज्योतिबा फुले ने सशक्त आंदोलन की बुनियाद (नींव) डालकर क्रांतिकारी आंदोलन जातिवाद, ब्राह्मणवाद और अंधविश्वास के विरूद्ध आरंभ किया था, जिसका क्रांतिकारी प्रभाव किसी न किसी रूप में महाराष्ट्र और पुराने मध्यप्रदेश की धरती पर जीवित था। महाराष्ट्र और पुराने मध्यप्रांत का भू–भाग उस क्रांति के बीज को अपने आप में संजोये हुये उस दिन की प्रतीक्षा कर रहा था, जिससे वह बीज सशक्त पौधा बनकर वृक्ष का रूप धारण कर सके। डॉ0 बाबा साहब अम्बेडकर के प्रभावशाली नेतृत्व में आरंभ दलित आंदोलन को प्रचंड समर्थन प्राप्त होने लगा था। मध्यप्रांत और बरार (विदर्भ) के आवंटन में महार जाति के लोगों की अपने–अपने क्षेत्रों में सभाएं होने लगी थी। नागपूर शहर महार जाति का गढ़ था और मध्यप्रांत तथा बरार की राजधानी होने के कारण यहाँ विशेष हलचल आरंभ हो गई थी। यहाँ की महार जाति के लोग जान की बाजी लगाकर दलित आंदोलन में कूद पड़े थे। उसमें नागपूर की महार जनता का उल्लेखनीय योगदान था। यहाँ के दलित नेता विठोबा रावजी मून, किसन फागू, बन्सोड़े पाटिल, एल. एन. हरदास, दशरथ पाटिल, रेवाराम कवाड़े आदि प्रमुख थे।

निष्कर्ष–

आज तक इस देश के स्वर्ण जातियों ने जितने भी लेखक साहित्यकार और इतिहासकार हुये है, किसी ने भी दलितों का वास्तविक और सच्चा इतिहास नहीं लिखा है। भारतीय इतिहास के लेखकों ने इतिहास की आधारभूत घटनाओं की ओर ध्यान ही नहीं दिया है। बल्कि सदैव दलितों की वास्तविक स्थिति के विपरीत लिखकर उन्हें जितना जलील किया जा सकता है, उसकी उपलब्धियों को नकारा गया है और सच्चाई को

छुपाया गया है। वर्तमान समय में दलितों का जो भी वास्तविक साहित्य उपलब्ध हैं, वह सब दलित लेखकों और साहित्यकारों द्वारा लिखा गया साहित्य है। यदि डॉ0 बाबा साहब अम्बेडकर प्राचीन धर्मग्रंथों, पाश्चात्य साहित्य और भारतीय इतिहास आदि का अध्ययन कर शोध नहीं किये होते और वास्तविक तथा सच्चा इतिहास उपलब्ध नहीं करा दिये होते, तो आज दलितों का इतिहास अंधकार के गर्त में डूबा हुआ होता।

संदर्भ ग्रन्थ सूची–

एम0डी0, बेकर, 2005, ''ए स्ट्डी ऑफ वूमेन स्टूडेन्ट्स वेल्यू, गोल ऑर कान्फिल्क्ट्स रिगार्डिंग स्ट्डीज, कैरियर, साोशल लाइफ एण्ड मैरिज'' इंडियन डेजरटेशन एब्सट्रेक्टस अप्रैल–जून, पी. 171

दुन, दाना 2014 ''जेन्डर इनइक्विटी इन एजूकेशन एण्ड एम्प्लायमेन्ट इन शिडयूल्ड् कास्ट् एण्ड ट्राइब्स ऑफ इण्डिया'' इन पापुलेशन रिसर्च एण्ड पॉलिसी रिव्यू, वोल्यूम 12, नं0 1 पी. 53–71

डी0 काट्ज, 2005 ''द फंक्शनल एप्रोच टू स्ट्डी ऑफ एटीट्यूड'' पब्लिक ऑपिनियन क्वाटरली, पी. 163–206

इंदू सक्सेना, 1976 ''चेन्जिंग एटीट्यूड ऑफ स्टूडेन्ट्स टुवर्ड्स माडर्न सोसाइटी'' पी0एच0डी0 थीसिस, अलीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सिटी।

एफ0आर0, एलन, एच0हार्ट0, डी0सी0 मिलर, डब्लू एफ0 आगबर्न एण्ड एम0एफ0 निमकाफ, 2013 ''टैक्नोलॉजी एण्ड सोशल चेन्ज'', न्यूयार्क, करोबेल।

जी0बी0, वेटर, 2014, ''द मेजरमेन्ट ऑफ सोशल एण्ड पॉलिटिकल एटीट्यूड एण्ड द रिलेटिड पर्सनालिटी फैक्टर'' जरनल ऑफ एबनार्मल एण्ड सोशल साइकोलॉजी, पी. 149–189

के0एस0 सिंह, 2005, ''एन्थ्रोपॉलोजीकल सर्वे ऑफ इण्डिया'' आई.सी.एस.एस.आर. प्रकाशन, नई दिल्ली।